The Chitransh Academic & Research
International Journal of Multidisaciplinary Reseaech
An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume1 | Issue 2 | March 2025
ISSN: 3049-303X (Online)
Website: www.thechitranshacadmic.in

महात्मा गांधी की युद्ध विरोधी विचारधारा: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

सुषमा कुमारी

शोध छात्रा, इतिहास विभाग,

श्री सत्य साईं विश्वविद्यालय, सीहोर

लेख विवरण

शोधपत्र

प्राप्ति तिथि: 19/06/2025
स्वीकृति तिथि: 20/06/2025
प्रकाशनतिथि: 30/06/2025

मुख्य शब्द : गांधीवाद, अहिंसा, युद्ध विरोध, सत्याग्रह, विश्व शांति

सारांश

यह शोध-पत्र महात्मा गांधी की युद्ध एवं अहिंसा संबंधी विचारधारा का ऐतिहासिक, दार्शनिक तथा व्यवहारिक दृष्टिकोण से समग्र विश्लेषण करता है। यद्यपि गांधीजी ने कुछ विशेष परिस्थितियों में आत्मरक्षा हेतु हिंसा को सहन किया, परंतु उनके जीवन और संघर्ष की मूल प्रेरणा अहिंसा रही। इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य यह है कि गांधीजी के युद्ध-विरोधी सिद्धांत आधुनिक विश्व में कितना प्रासंगिक हैं, विशेषकर परमाणु युग और वैश्विक संघर्ष की वर्तमान पृष्ठभूमि में। यह अध्ययन द्वितीयक स्रोतों के विवेचनात्मक विश्लेषण पर आधारित है तथा यह सिद्ध करता है कि गांधीवादी अहिंसा केवल दर्शन नहीं, बल्कि एक व्यावहारिक और नैतिक विकल्प है।

प्रस्तावना

मानव इतिहास के अध्ययन में युद्ध एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में सामने आता है जो न केवल शारीरिक विनाश का कारक रहा है, बल्कि उसने समाज की नैतिक, सांस्कृतिक एवं बौद्धिक संरचना को भी बारंबार प्रभावित किया है। यद्यपि युद्ध को सत्ता, प्रभुत्व या न्याय की प्राप्ति का माध्यम माना गया, तथापि इसके दूरगामी परिणामों ने यह सिद्ध किया कि यह एक अस्थायी और विघटनकारी उपाय है। बीसवीं शताब्दी में घटित दो विश्व युद्धों ने इस धारणा को और भी अधिक पुष्ट किया कि युद्ध के माध्यम से कोई स्थायी समाधान संभव नहीं। इस ऐतिहासिक संदर्भ में महात्मा गांधी का युद्ध और अहिंसा के प्रति दृष्टिकोण न केवल विशिष्ट है, बल्कि वह एक वैकल्पिक मानवतावादी दृष्टिकोण को भी प्रस्तुत करता है।

गांधीजी का विश्वास था कि युद्ध किसी भी परिस्थिति में न तो नैतिक है और न ही न्यायसंगत। उनके लिए अहिंसा केवल एक दार्शनिक आदर्श नहीं था, बल्कि वह उसे सामाजिक संघर्ष का एक व्यवहारिक और प्रभावी माध्यम मानते थे। उन्होंने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अहिंसा और सत्याग्रह को आत्मसात करते हुए यह स्थापित किया कि नैतिक बल, आत्मसंयम और सत्य की शक्ति के माध्यम से भी राजनीतिक परिवर्तन संभव है। इस शोध-पत्र का उद्देश्य महात्मा गांधी के युद्ध-विरोधी चिंतन की विवेचना करना है, जिसमें उनके विचारों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, वैचारिक निरूपण और समकालीन प्रासंगिकता का विश्लेषण किया जाएगा।

यह शोध-पत्र न केवल गांधीजी के विचारों की पुनर्व्याख्या करता है, बल्कि उसे वर्तमान वैश्विक परिप्रेक्ष्य से जोड़ते हुए यह मूल्यांकन भी करता है कि क्या आज के युग में, जब युद्ध का स्वरूप अधिक जटिल, तकनीकी और सर्वग्रासी हो चुका है, गांधीवादी अहिंसा एक व्यवहारिक विकल्प के रूप में प्रस्तुत की जा सकती है। साथ ही, यह अध्ययन इस बात की भी पड़ताल करता है कि किस प्रकार गांधीजी ने अपने विचारों को समय और परिस्थिति के अनुसार परिपक्व किया तथा अहिंसा को केवल एक निष्क्रिय नीति न मानकर एक सक्रिय संघर्ष-पद्धति के रूप में परिभाषित किया।

इस प्रकार, प्रस्तुत शोध-पत्र युद्ध और अहिंसा के मध्य गांधीवादी संतुलन की विवेचना करता है और यह विश्लेषण करता है कि इस विचारधारा की आज के सामाजिक, राजनीतिक और

वैश्विक संदर्भ में क्या उपादेयता है। गांधीजी के चिंतन का यह अध्ययन, न केवल ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि यह समकालीन विश्व में शांति, सह-अस्तित्व और नैतिक नेतृत्व की संभावनाओं को भी उद्घाटित करता है।

इस शोध का मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित है:

1. महात्मा गांधी के युद्ध और अहिंसा संबंधी विचारों की ऐतिहासिक विकास प्रक्रिया को समझना।
2. उनके विचारों की व्यवहारिकता का मूल्यांकन करना।
3. समकालीन संदर्भ में गांधीवादी अहिंसा की प्रासंगिकता का विश्लेषण करना।

इस शोध-पत्र में द्वितीयक स्रोतों जैसे कि गांधीजी के लेख, आत्मकथा, समकालीन पुस्तकों एवं विद्वानों की टिप्पणियों का विवेचनात्मक विश्लेषण किया गया है।

गांधीजी के युद्ध विरोधी विचारों का ऐतिहासिक विकास

महात्मा गांधी का युद्ध-विरोधी दृष्टिकोण किसी एक कालखंड में स्थिर नहीं रहा, बल्कि यह समय और परिस्थिति के साथ क्रमिक रूप से विकसित होता गया। उनके विचारों में आरंभ से ही अहिंसा की गहरी जड़ें थीं, परंतु उनके व्यावहारिक स्वरूप में परिवर्तन उनके अनुभवों, ऐतिहासिक घटनाओं और सामाजिक संदर्भों के अनुसार होता गया। गांधीजी ने अपने विचारों को कठोर सैद्धांतिक चौखटे में नहीं बांधा, बल्कि वे उन्हें यथार्थ के धरातल पर परखते और आवश्यकतानुसार परिमार्जित करते रहे।

प्रारंभिक काल में, विशेषकर १९०४ से १९१५ के मध्य, गांधीजी दक्षिण अफ्रीका में रहकर भारतीय समुदाय के अधिकारों के लिए संघर्ष कर रहे थे। इसी अवधि में रूस-जापान युद्ध हुआ, जिसमें जापान की विजय को उन्होंने एशिया के नवोदय के रूप में देखा। उन्होंने जापान की सैन्य सफलता को पश्चिमी औपनिवेशिक वर्चस्व के प्रतिपक्ष में देखा, फिर भी यह स्पष्ट कर दिया कि युद्ध किसी भी प्रकार से अंतिम समाधान नहीं है। उनका यह मत था कि राष्ट्रों को अपने मतभेद संवाद और समझदारी से सुलझाने चाहिए। उनका यह दृष्टिकोण उस समय के लिए अत्यंत प्रगतिशील था, जब वैश्विक राजनीति बल और प्रभुत्व पर आधारित थी।

१९१५ से १९४५ के कालखंड में गांधीजी के विचारों में अधिक परिपक्वता देखने को मिलती है। भारत आगमन के बाद उन्होंने अहिंसा को केवल व्यक्तिगत आचरण की मर्यादा तक सीमित न रखकर उसे एक व्यापक राजनैतिक उपकरण के रूप में प्रस्तुत किया। असहयोग आंदोलन, नमक सत्याग्रह और भारत छोड़ो आंदोलन जैसे विशाल जनआंदोलनों में उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि अहिंसा कोई निष्क्रिय नीति नहीं है, बल्कि यह अत्याचार के विरुद्ध सक्रिय प्रतिरोध की सशक्त पद्धति है। उन्होंने स्वीकार किया कि यदि कोई व्यक्ति कायरतावश अहिंसा को अपनाता है, तो ऐसी अहिंसा व्यर्थ है। उन्होंने स्पष्ट कहा—"कायरता से हिंसा उत्तम है, किंतु हिंसा की अपेक्षा अहिंसा श्रेष्ठ है।" यह कथन उनके व्यवहारिक दृष्टिकोण को दर्शाता है, जो नैतिक आदर्शवाद के साथ-साथ यथार्थ का भी ध्यान रखता है।

द्वितीय विश्व युद्ध के समय जब ब्रिटेन ने भारत से सहयोग मांगा, तो गांधीजी ने यह कहकर असहमति जताई कि स्वतंत्रता के बिना भारत से युद्ध में सहभागिता की अपेक्षा न्यायोचित नहीं है। उनका यह रुख केवल राजनैतिक विरोध नहीं था, बल्कि यह उनके उस नैतिक आग्रह का प्रतीक था जिसके अनुसार कोई भी राष्ट्र यदि स्वयं स्वतंत्र नहीं है, तो वह किसी अन्य युद्ध में भागीदारी के लिए बाध्य नहीं हो सकता।

१९४५ में जब जापान के हिरोशिमा और नागासाकी शहरों पर परमाणु बम गिराए गए, तो गांधीजी की युद्ध-विरोधी विचारधारा ने एक और गंभीर आयाम ग्रहण किया। उन्होंने इस विनाशकारी हथियार को मानवता के इतिहास की सबसे अमानवीय घटना बताया। उनका कहना था कि परमाणु बम ने मनुष्यता की उन भावनाओं की हत्या कर दी है जिन्हें सभ्यता ने सहस्राब्दियों में अर्जित किया था। उन्होंने इस शक्ति को मात्र भ्रम बताया और कहा कि नैतिक बल, आत्मबल और सत्य की जो शक्ति है, वह किसी भी भौतिक हथियार से कहीं अधिक स्थायी और प्रभावशाली है। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि अहिंसा की शक्ति भले ही तत्काल परिणाम न दे, लेकिन उसका प्रभाव दूरगामी और रचनात्मक होता है।

इस प्रकार गांधीजी के युद्ध विरोधी चिंतन की ऐतिहासिक यात्रा केवल सैद्धांतिक उद्घोषणा नहीं रही, बल्कि यह उनके व्यक्तिगत अनुभवों, ऐतिहासिक घटनाओं और समाज की यथार्थ स्थितियों से उत्पन्न एक विचारात्मक प्रक्रिया रही है। उनके चिंतन का मूल यही रहा कि युद्ध, चाहे वह किसी भी रूप में हो, अंततः मानवता के मूल्यों का ह्रास करता है, और इसके स्थान पर जो विकल्प अपनाया जाना चाहिए, वह है—अहिंसा पर आधारित नैतिक संघर्ष।

गांधीजी की अहिंसा: केवल एक नैतिक आदर्श नहीं, एक व्यवहारिक नीति

महात्मा गांधी की दृष्टि में अहिंसा मात्र कोई नैतिक या दार्शनिक संकल्पना नहीं थी, जिसे केवल उपदेश के रूप में अपनाया जाए। उन्होंने अहिंसा को जीवन का व्यावहारिक पथ माना, जो समाजिक परिवर्तन की एक प्रभावशाली और टिकाऊ प्रक्रिया बन सकती है। गांधीजी के लिए अहिंसा उस जीवंत शक्ति का नाम थी जो अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध एक सक्रिय, संगठित और नैतिक प्रतिरोध खड़ा कर सकती है। उनका यह स्पष्ट मत था कि अहिंसा कोई निष्क्रिय सहनशीलता नहीं, बल्कि वह सक्रिय और साहसिक हस्तक्षेप है, जो अत्याचार को बिना हिंसा के समाप्त करने की सामर्थ्य रखता है।

गांधीजी का यह विश्वास था कि जब कोई व्यक्ति या समाज नैतिक बल और सत्य के आधार पर अन्याय का प्रतिकार करता है, तो उसमें अहिंसा का वास्तविक स्वरूप प्रकट होता है। उन्होंने इसे एक 'शस्त्र' की संज्ञा दी, परंतु यह शस्त्र किसी को शारीरिक हानि पहुँचाने के लिए नहीं, बल्कि अन्याय को परास्त करने के लिए आत्म-बलिदान के माध्यम से प्रयोग होता है। उनका मानना था कि कोई भी राष्ट्र यदि निःशस्त्र होकर भी अहिंसा, संवाद और सत्याग्रह के माध्यम से अपने अधिकारों की रक्षा करता है, तो वह नैतिक दृष्टि से कहीं अधिक सशक्त और टिकाऊ हो जाता है। उन्होंने न केवल भारत के स्वतंत्रता संग्राम में इस नीति को साकार रूप दिया, बल्कि उसे पूरे विश्व के लिए एक उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया।

यह धारणा कि "सत्याग्रह कायरों का अस्त्र नहीं है, बल्कि यह वीरों का शस्त्र है", गांधीजी के विचारों की आत्मा है। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि जो व्यक्ति अपने विरोधी से प्रेम और करुणा के साथ व्यवहार करता है, वही वास्तव में वीरता का परिचय देता है। उन्होंने कहा कि हिंसा से मिली हुई विजय खोखली होती है, क्योंकि वह भय और शक्ति के अस्थायी संतुलन पर आधारित होती है। इसके विपरीत, अहिंसा से प्राप्त विजय स्थायी होती है, क्योंकि वह विरोधी के हृदय को जीतने की प्रक्रिया होती है, न कि उसके शरीर को पराजित करने की।

गांधीजी की यह नीति आज के सशस्त्र संघर्षों, आतंकवाद और शक्ति की राजनीति के संदर्भ में और भी अधिक प्रासंगिक हो जाती है। जब युद्ध और हिंसा अपने चरम पर हैं, तब यह विचार कि केवल अहिंसा ही वह माध्यम है जिससे विरोधी को नैतिक रूप से पराजित किया जा सकता है, अत्यंत सार्थक प्रतीत होता है। अहिंसा गांधीजी के लिए केवल संघर्ष की नीति नहीं

थी, बल्कि वह मानवता के पुनर्निर्माण का माध्यम भी थी। उनके अनुसार, अहिंसा का पालन करने वाला व्यक्ति स्वयं भी आत्मिक रूप से ऊँचा उठता है और समाज को भी ऊँचाई प्रदान करता है।

इस प्रकार, गांधीजी की अहिंसा केवल एक आदर्श नहीं रही, बल्कि वह ऐसी व्यावहारिक नीति बन गई, जिसे संगठित रूप में लागू कर सामाजिक परिवर्तन लाया जा सकता है। यह नीति न केवल तत्कालीन भारत के लिए उपयुक्त रही, बल्कि यह वैश्विक समाज के लिए भी एक स्थायी समाधान का मार्ग प्रस्तुत करती है। गांधीजी ने इसे अपने जीवन से सिद्ध कर दिखाया कि नैतिक साहस, आत्मबल और सत्य के साथ यदि संघर्ष किया जाए, तो किसी भी शक्ति से बड़ा परिवर्तन संभव है।

समकालीन संदर्भ में गांधीजी के विचारों की प्रासंगिकता

वर्तमान वैश्विक परिदृश्य अत्यंत जटिल और संघर्षपूर्ण हो चला है, जहाँ एक ओर राजनीतिक वर्चस्व की आकांक्षाएं हैं, वहीं दूसरी ओर सीमित संसाधनों को लेकर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तनाव, टकराव और अविश्वास की स्थिति बनी हुई है। आतंकवाद, सीमाविवाद, धार्मिक कट्टरता और पर्यावरणीय संकट जैसे मुद्दे निरंतर मानवता को चुनौती दे रहे हैं। इसके साथ ही परमाणु शक्ति के बढ़ते विस्तार और युद्ध की संभावना ने यह संकेत दिया है कि यदि इन समस्याओं के समाधान के लिए कोई वैकल्पिक मार्ग नहीं खोजा गया, तो संपूर्ण मानव सभ्यता विनाश की ओर अग्रसर हो सकती है। ऐसे चिंताजनक समय में महात्मा गांधी की युद्ध-विरोधी विचारधारा और अहिंसा पर आधारित दर्शन अत्यंत सार्थक और समय-संगत प्रतीत होता है।

गांधीजी का यह दृढ़ विश्वास था कि शक्ति का सर्वोच्च स्वरूप नैतिक बल होता है, न कि सैन्य सामर्थ्य। उन्होंने बार-बार यह उद्घोष किया कि स्थायी शांति केवल संवाद, करुणा, और सहअस्तित्व के माध्यम से ही संभव है। उन्होंने यह भी कहा कि असहमति स्वाभाविक है, लेकिन यदि उसका उत्तर घृणा या हिंसा से दिया जाए, तो वह समाज को केवल और अधिक खंडित ही करेगा। उनका यह दृष्टिकोण आज के उस समाज के लिए आवश्यक बन गया है, जो राजनीतिक कट्टरता, सामाजिक विघटन और असहिष्णुता के नए-नए रूपों से जूझ रहा है।

आज जब आधुनिक युद्ध न केवल सैनिक मोर्चों तक सीमित रह गए हैं, बल्कि वे मानसिक, सूचना-प्रौद्योगिकी, आर्थिक और जैविक स्तर तक फैल गए हैं, गांधीजी की अहिंसा इन सभी का उत्तर प्रदान करती है। उनकी विचारधारा हिंसा के हर स्वरूप के प्रतिकार का सशक्त नैतिक औजार प्रस्तुत करती है। यह विचार कि विरोध के लिए हथियार की आवश्यकता नहीं होती, बल्कि आत्मबल, धैर्य और सत्य की अडिग निष्ठा पर्याप्त होती है—वर्तमान समय में और भी अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है।

वर्तमान समय में अनेक सामाजिक आंदोलनों ने गांधीवादी विचारधारा को अपने संघर्ष का मूलाधार बनाया है। चाहे वह अफ्रीका-अमेरिका में नागरिक अधिकार आंदोलन रहा हो, या भारत में पर्यावरण-संरक्षण हेतु किए गए चिपको आंदोलन जैसे प्रयास—सभी ने अहिंसा, सविनय अवज्ञा और नैतिक प्रतिरोध को अपने संघर्ष का आधार बनाया। यहाँ तक कि जलवायु परिवर्तन, लैंगिक समानता और जातीय न्याय के लिए हो रहे वैश्विक प्रयासों में भी गांधीजी की प्रेरणा स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

इस प्रकार, गांधीजी का विचार-दर्शन केवल अतीत की गाथा नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए एक जीवंत और व्यावहारिक दिशा-सूचक बन चुका है। उनका विश्वास था कि विचारधाराएँ अमर होती हैं, और यदि वे सत्य और नैतिकता पर आधारित हों, तो समय की कसौटी पर सदैव खरी उतरती हैं। गांधीजी के सिद्धांत हमें यह सिखाते हैं कि संघर्ष आवश्यक हो सकता है, किंतु उसमें मानवता को समाप्त नहीं होना चाहिए; असहमति स्वाभाविक है, परंतु उसके समाधान का मार्ग सह-अस्तित्व और संवाद ही होना चाहिए। आज के विखंडित, हिंसक और असहिष्णु समाज के लिए यह दृष्टिकोण मात्र विकल्प नहीं, अपितु अनिवार्यता बन चुका है।

निष्कर्ष

महात्मा गांधी का युद्ध-विरोधी दृष्टिकोण मात्र एक सैद्धांतिक कल्पना या नैतिक आदर्श नहीं था, बल्कि वह एक पूर्णतया व्यावहारिक और क्रांतिकारी नीति थी, जिसे उन्होंने अपने जीवन में न केवल आत्मसात किया, बल्कि समूची मानवता के सामने एक उदाहरण के रूप में प्रस्तुत भी किया। उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि जब संघर्ष सत्य, आत्मबल और नैतिकता पर आधारित हो, तो वह किसी भी साम्राज्य, सत्ता या अन्यायपूर्ण व्यवस्था को चुनौती देने में सक्षम होता है। उनका यह विश्वास कि हिंसा से उत्पन्न विजय अंततः खोखली होती है, जबकि अहिंसा से प्राप्त

सफलता न केवल स्थायी होती है, बल्कि वह मानवीय मूल्यों को भी समृद्ध करती है—आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना उनके समय में था।

आज के युग में जब युद्ध का स्वरूप और अधिक विध्वंसकारी हो गया है—जहाँ परमाणु हथियार, जैविक युद्ध, आतंकवाद और वैचारिक संघर्ष निरंतर मानव अस्तित्व को चुनौती दे रहे हैं—ऐसे में गांधीजी का चिंतन एक आशा की किरण बनकर सामने आता है। उनका दर्शन यह स्पष्ट करता है कि किसी भी सामाजिक, राजनीतिक या वैचारिक संघर्ष का समाधान हिंसा में नहीं, बल्कि संवाद, धैर्य, सहिष्णुता और नैतिक साहस में निहित है। गांधीजी ने यह भी दर्शाया कि हिंसा का विकल्प केवल अहिंसा नहीं, बल्कि एक संगठित, सक्रिय और विवेकपूर्ण प्रतिरोध भी हो सकता है जो शोषक को आत्म-मंथन के लिए विवश कर दे।

उनकी विचारधारा आज भी संसार को यह सिखाती है कि संघर्ष की सफलता उसकी नैतिकता में निहित होती है, न कि उसकी सैन्य या भौतिक शक्ति में। गांधीजी ने अपने विचारों के माध्यम से यह भी बताया कि यदि लक्ष्य न्यायपूर्ण हो और साधन नैतिक हों, तो परिवर्तन निश्चित और स्थायी होता है। उनकी यह धारणा कि अहिंसा केवल एक सिद्धांत नहीं, बल्कि समस्त मानव जाति के लिए एक जीवन शैली बन सकती है, आज की वैश्विक चुनौतियों के मध्य अत्यंत सार्थक मार्गदर्शन प्रदान करती है।

इस प्रकार, गांधीजी की युद्ध-विरोधी नीति न केवल अतीत का आदर्श है, बल्कि वर्तमान का संबल और भविष्य की आवश्यकता भी है। उनका जीवन, उनके विचार और उनके संघर्ष हमें यह प्रेरणा देते हैं कि जब तक सत्य, अहिंसा और न्याय की नींव पर आधारित संघर्ष जीवित है, तब तक मानवता के लिए आशा शेष है।

सन्दर्भ

1. *राष्ट्रीय सुरक्षा,* जे. एम. श्रीवास्तव, चन्द्रप्रकाश बुक डिपो, हापुड़
2. *स्ट्रैटजिक विचारों का विकास*, डॉ. डी. एन. सिंह, लोकप्रिय प्रकाशन, शास्त्रीनगर, मेरठ
3. *गांधी: राष्ट्रीय अवधारणा व आयाम,* डॉ. एम. के. मिश्रा एवं डॉ. कमला दधिच, अर्जुन पब्लिकेशन, नई दिल्ली
4. *गांधी के विचारों की 21वीं सदी में प्रासंगिकता,* माणक जैन, आदि पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली